IJRAR.ORG E-ISSN: 2348-1269, P-ISSN: 2349-5138

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH AND ANALYTICAL REVIEWS (IJRAR) | IJRAR.ORG

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भारतीय ज्ञान परम्परा के रूप में कौटिल्य अर्थशास्त्र की उपादेयता

रविन्द्र कुमार शर्मा
सहायक आचार्य (ई.ए.एफ.एम),
राजकीय लोहिया महाविद्यालय (चूरू)

शोध सारांश –

कौटिल्य, जिनको चाणक्य या विष्णुगुप्त के नाम से भी जाना जाता हैं, मौर्य राज्य के संस्थापक– चन्द्रगुप्त मौर्य के प्रधानमंत्री थे, कौटिल्य एक महान दार्शनिक के साथ –साथ्ज्ञ अर्थशास्त्र /दण्डशास्त्र/राजनीति शास्त्र /प्रबन्ध शास्त्र/व्यापार प्रणाली और सैन्य–शास्त्र के विद्वान भी थे । चाणक्य द्वारा एक प्रधान सलाहकार के रूप में, मौर्य शासनकाल में राज्य के सफल संचालन हेतु उपर्युक्त सभी विषयों पर राजनैतिक एवं रणनैतिक सूत्रों को उद्धृत किया गया था जिन्हे **"कौटिल्य अर्थशास्त्र"** नाम की रचना के रूप में उद्बोधित किया जाता रहा है । एक राज शासन के संचालन में कौटिल्य के इन सूत्रों एवं सिद्वान्तों की महिमा इतनी सटीक थी कि ये वर्तमान परिपेक्ष में भी खरे उतरते है ।[1] प्रस्तुत आलेख का उद्वेश्य भारतीय ज्ञान परम्परा के रूप में कौटिल्य के सिद्वान्तों का वर्तमान परिपेक्ष में प्रासंगिकता का विश्लेषण करना है तथा यह निर्धारण करना है कि वर्तमान सामाजिक एवं राजनीतिक ताने–बाने में कौटिल्य के अर्थशास्त्र की भूमिका कितनी प्रभावी है ।

प्रस्तावना –

भारतीय ज्ञान परम्परा निम्न दो शब्दों का मिश्रण है – भारतीय ज्ञान एवं परम्परा

भारतीय ज्ञान का तात्पर्य है – भारत का ज्ञान अर्थात् भारत के लोगों की बौद्विक, तार्किक और सैदान्तिक समझ या जागरूकता , जो विचार, चिन्तत, मनन, मन्थन और अनुभव द्वारा प्रदत है ।

परम्परा अर्थात् अतीत का ऐसा ज्ञान जो सामाजिक कार्यशैली, संस्कृति, सभ्यताओं, व्यवहारों, विश्वासों और जन–आदतों द्वारा पनपा है तथा जो पीढी दर पीढी निरन्तर गतिशिल है एवं जिसे निरन्तर परखा एवं सहेजा गया है।

इस प्रकार भारतीय ज्ञान परम्परा से तात्पर्य उस प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्वति से है जो भारतीय संस्कृति में निहित है जिसमे वेद–वेदांग, उपनिषद, श्रुति, स्मृति, दर्शनशास्त्र, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र इत्यादि सम्मिलित है तथा जो भारतीय ज्ञानी–ऋषियो के अनुभवों , अवलोकनों , प्रयोगो के विश्लेषण के प्रतिभूत अभिलक्षित हुए हैं।[2]

कौटिल्य का अर्थशास्त्र प्राचीन भारतीय ज्ञान परम्परा का एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है । कौटिल्य द्वारा इस ग्रन्थ की रचना तब की गयी थी जब सरकार का स्वरूप राजतन्त्र था और राजाओं से यह आशा की जाती थी कि वह अपने साम्राज्य के कुशल संचालन एवं सुरक्षा के साथ सीमा–विस्तार वाद की नीति भी अपनाये ।[3] सीमा विस्तारवादी नीति के लिए जहां कुटनीतिक व्युहरचानाएं जितनी महत्वपूर्ण है उतनी ही महत्वपूर्ण है सैन्य एवं राजनीतिक व्यूहरचनाएं । इस प्रकार एक शक्तिशाली राजतंत्र के संचालन हेतु कौटिल्य द्वारा अपने अर्थशास्त्र में पूर्वपेक्षाओं और विधाओं पर बल दिया गया जो कि सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक , नैतिक और प्रशासनिक दृष्टि से प्रभावी हो।

मुख्य शब्द

कौटिल्य, आर्थिक प्रणाली, शिक्षा प्रणाली, राजनैतिक व्यवस्था, दण्डनीति, प्रशासनिक प्रणाली ।

अध्ययन के उददेश्य

इस शोध का मुख्य उद्देश्य भारतीय ज्ञान परम्परा के रूप में कौटिल्य के अर्थशास्त्र की उपादेयता का वर्तमान विश्लेषण करना है , शोध के प्रमुख उद्देश्य निम्न है –

1. कौटिल्य के आर्थिक एवं शैक्षिक प्रणाली की उपादेयता का विश्लेषण ।
2. कौटिल्य के राजनैतिक एवं प्रशासनिक विचारों की वर्तमान सन्दर्भ में उपयोगिता का विश्लेषण ।

शोध पाठ

कौटिल्य का अर्थशास्त्र 6000 श्लोंको का समुह है जो कि 15 अधिकरणों तथा 150 प्रकरणों में विभाजित है । कौटिल्य द्वारा इस अर्थशास्त्र में अर्थव्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था, प्रबन्ध एव प्रशासनिक व्यवस्था, राजनीतिक व्यवस्था, न्याय व्यवस्था जैसे विषय शामिल कर एक राज्य के लिए इनकी उपयोगिता भी सिद्व की है ।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र और शिक्षा प्रणाली –

कौटिल्य के मतानुसार एक राज्य के लोक जन तभी सभ्य एवं नवीन विचारों से ओत–प्रोत होगे जब उस समाज में एक अच्छी विद्या प्रणाली विद्यमान हो, क्योंकि विद्या ही विनय का मूल है कौटिल्य के अनुसार – एक राजा को सुशिक्षित होना अति–आवश्यक है उसे न केवल अंकगणित और लेखन सहित चारों विद्याओं का ज्ञान होना आवश्यक है बल्कि सदैव शिक्षित और प्रबुद्वजनों की संगत में रहकर अपने ज्ञान को भांजते रहना भी अति–आवश्यक है , उनके अनुसार –

विद्याविनीतो राजा हि प्रजानां विनय रते : ।
अनन्या पृथ्वीं मुक्ते सर्वभूतहिते रतः ।।

अर्थात विद्या से विनीत राजा , सम्पूर्ण प्रजा के हित एवं विनय में तैयार रहता है तथा वह निश्चय ही पृथ्वी का चिर–काल तक उपभोग करता है।[4] उन्होने विद्या के चार रूपों का वर्णन किया है जिसमें पहली है **आन्वीक्षकी** – जो कि संख्या , योग, जांच–परख की शिक्षा से सम्बन्धित है , उनके अनुसार आन्वीक्षकी विद्या से लोगों का भला होता है वे सुख और दुख दोनों ही परिस्थितियों में बुद्वि और विवेक से कार्य करते है, आन्वीक्षकी से ही चतुरता पैदा होती है । दूसरी है **त्रयी** – इसमें वेद और धर्म की शिक्षा शामिल है **कौटिल्य के अनुसार धर्म का अर्थ कर्म से है** जैसे –ब्राहम्ण का धर्म शिक्षा लेना और शिक्षा देना है , क्षत्रिय का धर्म शास्त्रों से जीवन निर्वाह करते हुए प्राणि की रक्षा करना है , वैश्य का धर्म व्यापार करना है और शुद्र का धर्म सेवा सुश्रुषा है । वैसे ही एक राजा का धर्म यह है कि वह अपनी प्रजा को धर्म मार्ग (कर्म) से भ्रष्ट न होने देवें । तीसरी है **वार्ता अर्थात् व्यापार** ऐसी विद्या है जो कोष अर्थात खजाना/ धन संग्रह में सहायक होती है और इस कोष के द्वारा ही जातक को – चाहे वो शत्रु हो, पराया हो या फिर सैन्य ही क्यों न हों ,वश में किया जा सकता है । चौथी विद्या है **दण्डनीति –** दण्डनीति एक ऐसी विद्या है जिससें समाज सभ्य बनता है । कौटिल्य कहते है कि एक राजा द्वारा दोषी को हमेशा उचित दण्ड देने के लिए तैयार रहना चाहिए जिस प्रकार एक बडी मछली छोटी को खा जाती है उसी प्रकार बिना उचित दण्ड के अभाव में बलबान व्यक्ति निर्बल को निश्चय ही कष्ट पहुचाएगें । इस प्रकार कौटिल्य अर्थशास्त्र में शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति के चहुँमखी सर्वागिंण विकास की विचारधारा प्रस्तुत की गयी है ।

कौटिल्य के अनुसार राजनीतिशास्त्र

कौटिल्य के अनुसार एक राजा ही राज्य की राजनीति का केन्द्र बिन्दु होता है , राजा के व्यवहार और कर्म से ही एक राज्य की दशा और दिशा दोनों तय होती है । कौटिल्य के अनुसार राजनीतिशास्त्र में निपुण शासक निश्चित ही अपने शासन और राज्य को चिरस्थायी काल तक चरमोत्थान तक पहुचाता है ।[5] राजनीति के सन्दर्भ मे कौटिल्य की प्रमुख बातें निम्नानुसार है –

- एक राजा को चाहिए कि वह युद्व से पूर्व हमेशा ही अपने शत्रु के बल और अबल, अनुकुल एवं प्रतिकुल समय एवं स्थान के सम्बन्ध में सम्पूर्ण जानकारी रखें तथा स्वयं के बलाबल से शत्रु के बलाबल की तुलना के पश्चात ही युद्व सम्बन्धी निर्णय करें ।
- एक योग्य राजा वहीं है जो मन्त्रशक्ति अर्थात् बुद्वि और विवेक में निपुण हों , भले ही वह स्वयं प्रतिद्वन्द्वी राजा से कम ताकतवर या कम प्रभावशाली ही क्यो न हों ।
- एक राजा को चाहिये कि अगर एक शत्रु राज्य की सैना उसके कब्जे में हो और उसके नगर में ठहरी ही हो तो ऐसी शत्रु सैना का उपयोग किसी अन्य शत्रु के साथ युद्व करवाकर करे । ऐसी स्थिति में दोनों में से किसी भी सैना का नाश होने पर स्वयं के अभिष्ट की ही सिद्वी होगी।
- एक राजा को युद्व के निमित्त होने वाले क्षय की लघुता और गुणता का आकलन हमेशा ही करना चाहिए।
- कौटिल्य एक राजा को फूट डालो और राज करो कि नीति पर सलाह देते हुए कहते हैं कि शत्रु राजा के सम्बन्ध में यदि मित्र राजा सन्धि या सहयोग नहीं करे तो मित्र को बार–बार शत्रु से खिन्न करने का जतन करें और अगर फिर भी मित्र आपके अनुकुल नहीं होवे तो उसके सामन्तों को किसी भी तरिके से कुटनीति द्वारा (साम/दाम/दण्ड /भेद) अपने अनुकुल कर मित्र राज्य में फूट डलवायें ।
- कौटिल्य का अर्थशास्त्र साम/दाम /दण्ड/भेद के बारे मे विस्तृत चर्चा करते हुए बताता है कि इनमें से राजनीति में कौनसा उपाय कब और कैसे काम में लिया जाना चाहिए । उनके अनुसार राजनीति के अन्तर्गत कुटनीति का प्रयोग तब किया जाना चाहिए जब प्रतिद्वन्द्वी राजा सैन्य बल में अधिक शक्तिशाली हो, कुटनीति के अन्तर्गत **साम** का उपयोग सदैव तभी उचित रहेगा जब प्रतिद्वन्द्वी या शत्रु राजा कल्याणबुद्वि का हो , जब प्रतिद्वन्द्वी राजा लोभी हो तो **दाम** का उपाय करना चाहिए , इसी प्रकार द्वेष/वैर रखने वाले राजा को भय दिखाकर **(भेद)** वश में करने का जतन करना चाहिए ।

कौटिल्य के अनुसार प्रशासनिक व्यवस्था

कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र के भाग –2 ''अध्यक्षप्रचार'' के अन्तर्गत एक राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था का उल्लेख किया है । कौटिल्य के अनुसार एक राजा ही प्रशासनिक व्यवस्था का प्रधान होता है किन्तु जिस प्रकार अकेला चना भाड नही फोड सकता , ठीक उसी प्रकार एक राजा अपने सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक लक्ष्यों को अकेला प्राप्त नहीं कर सकता । चूंकि राजकीय गतिविधियों का दायरा बहुत अधिक विविध एवं विस्तृत होता है एवं इनके निमित्त किए जाने वाले कार्यो हेतु योग्य एवं दक्ष व्यक्तियों की नियुक्ति की नितांत आवश्यकता होती है अतः एक राजा को राजतन्त्र के सफल संचालन, नीतिगत निर्णयों एवं महत्वपूर्ण मामलों में परामर्श एवं सहयोगार्थ हेतु मत्रिपरिषद का गठन और विभागाध्यक्षों की नियुक्ती की जानी अति आवश्यक है । उनके अर्थशास्त्र में **प्रशासनिक व्यवस्था** के अन्तर्गत निम्न का विस्तृत वर्णन मिलता है –

1. **गतिविधियों के अनुरूप विभाग और विभागाध्यक्षों की नियुक्ति –**

कौटिल्य ने राज्य को जनपद की संज्ञा दी है उनके अनुसार एक राजा को चाहिए कि वो अपने क्षेत्राधिकार वाली भूमि पर गांवों की स्थापना करें । इन गांवो की बसावट इस तरिके से की जावें कि इनमें सामान्यतः आसपास के निकट गांवो से आसानी से सम्पर्क स्थापित हो सके । उनके अनुसार 800 गांवों के बीच में एक **स्थानीय**, 400 गावों के समूह में एक **द्रोणमुख** और 10 गांवो के समूह में **संग्रहण** नामक स्थान की स्थापना की जावें और राज्य की सीमा के अन्त में चारों दिशाओं में दुर्ग की स्थापना की जानी चाहिए और इन स्थापित दुगों की सुरक्षा, संचालन और व्यवस्था हेतु जिस अधिकारी की नियुक्ति की जावे , उसे कौटिल्य ने **अन्तपाल** संज्ञा दी है । इसी प्रकार अन्य राजकीय शासन व्यवस्था एवं गतिविधियों के संचालन हेतु योग्य, शिक्षित और कार्य विशेष में निपुण एवं कुशल व्यक्तियों को उनकी योग्यता के अनुसार ही नियुक्त किया जाना चाहिए । प्रत्येक गतिविधि हेतु अलग विभाग स्थापित किया जाना चाहिए , प्रत्येक विभाग की सभी महत्वपूर्ण गतिविधियां विभागाध्यक्ष की निगरानी एवं नियन्त्रण में ही सम्पन्न होनी चाहिए तथा विभागाध्यक्ष अपने विभाग के प्रत्येक कार्यो के प्रति राजा के प्रति उत्तरदायी होगा। कौटिल्य के अर्थशास्त्रानुसार जिन महत्वपूर्ण पदो पर अध्यक्षों की नियुक्ति की जानी चाहिए वो निम्नानुसार है –

- **सन्निधापति अर्थात् कोषाध्यक्ष** – यह कोष/भाण्डागार (राजकीय खजाना) का प्रमुख अधिकारी होता है । यह राजकीय खजाने या द्रव्य के संग्रह और सुरक्षा से सम्बन्धित कार्यो हेतु प्रतिबद्व होता है ।

- **समाहर्ता अर्थात् कर संग्रहक** – यह वह अधिकारी होता है जो राजा की तरफ से राजकर वसूलता है । कर के परिमाण, समय, अवधि और स्थान के निर्धारण के लिए प्रतिबद्व होता है ।

- **अक्षपटल एवं गाणनिक –** राजकीय धन (राजस्व) के आय और व्यय की गणना और लेखा जिस स्थान पर किया जाता है उसे अक्षपटल कहते है तथा उक्त कार्य हेतु जिनकी नियुक्ति की जाती है उन्हे गाणनिक कहते हैं ।

- **उपयुक्त परीक्षक** – राजकीय कार्यो पर नियुक्त किए गए छोटे अधिकारियों को युक्त कहा जाता है इन छोटे अधिकारियों के कार्यो के नियमन नियन्त्रण और जांच के लिए जिन अधिकारियों की नियुक्ति की जाती है उन्हे उपयुक्त परीक्षक या जांच अधिकारी कहा जाता है ।

- **आकराध्यक्ष** – आकरा खान को कहते है आकराध्यक्ष एक ऐसा व्यक्ति नियुक्त किया जाता है जिसे धातु विज्ञान, रसायन विज्ञान, मणियों एवं रत्नों के बारे में अच्छी जानकारी हों । यह खनन गतिविधियों से सम्बन्धित कार्यों का संचालन करता है ।

- **सुवर्णाध्यक्ष** – खनन कार्यो से प्राप्त धातुओं (सोना/चान्दी/ताम्बा इत्यादि) को जिस स्थान पर संशोधित (गलाया/तपाया) किया जाता है उस स्थान को अक्षशाला कहते है और अक्षशाला का प्रमुख सुवर्णाध्यक्ष कहलाता है ।

- **कोष्ठागाराध्यक्ष** – कोष्ट पेट को कहा जाता है इसी प्रकार पेट से सम्बन्धित द्रव्य जैसे –धान्य पदार्थ ,घी, नमक, मसाले, तेल इत्यादि खाने योग्य पदार्थ भी कोष्ठ ही कहलाते है । इन खाद्य पदार्थो के

सग्रह और सुरक्षा के लिए जो भण्डार बनाये जाते है उन्हे कोष्ठागार कहा जाता है तथा कोष्ठागार का प्रमुख कोष्ठागाराध्यक्ष कहलाता है ।

- **पण्याध्यक्ष –** बिक्रीयोग्य राजकीय पदार्थ पण्य कहलाते है तथा इन पण्यों के क्रय–विक्रय हेतु जिस राजकीय अधिकारी की नियुक्ति की जावें उसे पण्याध्यक्ष कहलाता है ।
- **आयुधागाराध्यक्ष –** युद्व सामग्री अर्थात् युद्व में काम आने वाले हथियारों (अस्त्र–शस्त्र) का निर्माण करवाने वाला प्रमुख अधिकारी ।
- **पौतावाध्यक्ष** – तौल –माप निर्धारण करने वाला राजकीय अधिकारी ।
- **शुल्काध्यक्ष–** लोगों अथवा व्यापारियों से शुल्क (चुंगीकर) संग्रहण करने वाला प्रमुख अधिकारी ।
- **सीताध्यक्ष –** कृषि कार्यो एवं खेतों के निरीक्षण के लिए नियुक्त प्रमुख अधिकारी , यह कृषि विभाग का मुखिया होता है ।
- **मुद्राध्यक्ष –** राजकीय मुद्रा जारी करने वाला प्रमुख अधिकारी ।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र उक्त प्रमुख विभागाध्यक्षों द्वारा किए जाने वाले कार्य, उनकी नियुक्ति, पदोन्नति, योग्यता, आचरण, नैतिकता, गुण, व्यवहार, जांच–परख एवं चरित्र के सम्बन्ध में विस्तृत विवेचना प्रस्तुत करता है ।

2. प्रशिक्षण और जांच –

कौटिल्य का अर्थशास्त्र न केवल प्रशासनिक अधिकारियों की नियुक्ति की विवेचना करता है अपितु लोकसेवको के प्रशिक्षण पर भी बल देता है । कौटिल्य के अनुसार केवल उन्ही लोकसेवकों को प्रशिक्षण सार्थक है जो अपने विचार और बौद्विक क्षमताओं को उन्नत करने के इच्छुक हों । अर्थशास्त्र के अनुसार यदि कोई लोकसेवक प्रशिक्षण के पश्चात लोकसेवा /राज्य सेवा से निष्क्रीय होना चाहते है या सेवा से त्याग करना चाहते है तो ऐसी स्थिति में सेवा से मुक्त होने के प्रतिफल या हर्जाने के रूप में उससे आर्थिक दण्ड वसूल किया जाना उचित रहेगा। यह अर्थशास्त्र इन लोकसेवकों द्वारा किए गए कार्यो और उनकी कर्तव्य के प्रति प्रतिबद्वता के सम्बन्ध में समय –समय पर जांच /निरीक्षण पर भी बल देता है ।

3. भ्रष्टआचरण की स्थिति में दण्डात्मक कार्यवाही

अर्थशास्त्र के अनुसार यदि कोई लोकसेवक ऐसी गतिविधियों या प्रयोगों में लिप्त है जों कि राज्य की सुरक्षा और खुशहाली के लिए अच्छा नहीं है या भ्रष्ट आचरण में लिप्त है तो ऐसी दशा में वह लोकसेवक दण्ड या जुर्माने का भागी है । दण्ड या जुर्माने की राशि भ्रष्ट आचरण की गतिविधियों के अनरूप राज्य को हुये नुकसान के अनुपात मे आरोपित की जानी चाहिए । जैसे यदि कोई कोषाध्यक्ष अनुचित प्रयोग और व्यवहार द्वारा कोष का क्षय करता है तो उससे होने वाली राशि से दुगनी राशि जुर्माने के रूप में ली जावें । इसी प्रकार यदि कोषाध्यक्ष सुरंग बनाकर कोष का अपहरण करे तो ऐसी स्थिति में वह प्राणदण्ड का भोगी होगा।

कौटिल्य के अनुसार व्यापार प्रणाली –

कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार व्यापार एवं व्यापारिक क्रियाएं राज्य के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि व्यापारिक क्रियाओं के द्वारा ही राजकीय कोष में वृद्वि संभव होती है और राजकीय कोष मे वृद्वि ही सभी राजकीय गतिविधियों का सार है अतः जर्जर या अल्प कोष के एक राजा केवल और केवल एक विवश हाडमांस का लकवाग्रस्त पुतला मात्र है ।[2]

कौटिल्य अर्थशास्त्र निर्बाध और स्वतन्त्र व्यापार की सार्थकता का वर्णन करता है उन्होने क्रय–विक्रय, सौदेबाजी, बजट, राजस्व एवं व्यय आकलन , करारोपण, वित्तीय उत्तरदायित्व, वित्तीय लेखाकन, लेखा–परीक्षा इत्यादि महत्वपूर्ण वित्तीय घटकों का उल्लेख किया है जिनमें प्रमुख निम्न है –

बाजार – कौटिल्य के अनुसार व्यापारिक गतिविधियों के लिए बाजार का होना आवश्यक है , बाजार वह स्थान होता है जहां वस्तुओं और सेवाओं का क्रय विक्रय किया जाता है । कौटिल्य के अनुसार द्रव्य की प्रकृति के अनुसार बाजार का स्थान और नामकरण निश्चित किया जाना चाहिए । स्वर्ण–आभूषण के व्यापार से से सम्बन्धित स्थान या बाजार को कौटिल्य ने विशिखा के नाम से उद्बोधित किया गया है ।

आय–व्यय और बजट – कौटिल्य का अर्थशास्त्र इस बात का पुरजोर समर्थन करता है धन अथवा कोष एक राज्य की शक्ति का प्रमुख साधन है । उनके अनुसार एक राजा को यह निश्चित किया जाना आवश्यक है कि किन –किन साधनों से आमदनी प्राप्त की जा सकती है तथा कौन–कौनसे स्थान व्यय के है अर्थात् आय के स्त्रोत क्या है और व्यय की उपयोगिता क्या है । यदि किसी धन स्त्रोत से प्राप्त होने वाली आय, उसके प्राप्त करने में लगने वाले व्यय से अधिक हो तो ही ऐसे धनस्त्रोत की सार्थकता है, अनन्यथ नहीं । अतः आय के स्त्रोत और उससे होने वाली आमदनी और उस आमदनी को प्राप्त करने में व्यय होने वाली राशि का परिकलन किया जाना अति–आवश्यक है । कौटिल्य का अर्थशास्त्र एक राज्य के लिए धनसंग्रह के विभिन्न स्त्रोत जैसे – कृषि कर, चुगीकर , व्यापार कर, खनिज कर, रक्षाकर और उनके परिमाण के बारे में भी उल्लेख करता है ।

लेंखाकन एवं लेखा परीक्षा– कौटिल्य अर्थशास्त्र में लेखांकन और लेखा अधिकारियों की नियुक्ति की अनिवार्यता का वर्णन किया गया है । लेखा अधिकारियों का कर्त्तव्य है कि वे नियत समय पर राजकीय व्यवहारों के सम्बन्ध में सही लेखा पुस्तके (खाता बही) संधारित करें । लेखा अधिकारियों का यह भी दायित्व था कि वे लेखा परीक्षक के नियम किए जाने पर लेखा पुस्तको एव इन्द्राज व्यवहारों का परीक्षण करावें ।

मुद्रा – राजकीय व्यवहारों के लिए जिस चिन्ह का प्रयोग किया जाता था, उसी को मुद्रा कहा जाता है । मुद्रा जारी करने में नियुक्त प्रधान अधिकारी मुद्राध्यक्ष कहलाता है । एक मुद्राध्यक्ष का यह कार्य होता है कि वह राजकीय व्यवहारों के लिए राज्य में आये व्यक्तियों के प्रत्येक व्यक्ति के लिए मापक लेकर मुद्रा जारी करेगा । यदि कोई व्यक्ति जाली मुद्रा के साथ व्यवहार करें तो उसे प्रथम कोटि का उचित दण्ड दिया जावें ।

वित्तीय प्रबन्ध –कौटिल्य अर्थशास्त्र में न केवल वित्तीय प्रबन्ध के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से चर्चा की गयी है, बल्कि वित्तीय कुप्रबन्ध के कारण होने वाले कोष क्षय के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है । अर्थशास्त्र के अनुसार – वित्तीय प्रबन्ध का प्रमुख दायित्व कोषाधिकारी का होता है वहीं राजकीय कोष में जमा होने वाले आगमों और व्ययो के प्रति जिम्मेदार है । अर्थशास्त्र कहता है कि यदि कोषाधिकारी के वित्तीय कुप्रबन्ध के कारण यदि कोष का क्षय होता है तो ऐसी स्थिति में कोषाधिकारी दण्ड का भागी होगा । अर्थशास्त्र ऋण प्रबन्ध पर भी प्रकाश डालता है इसमें ऋणदाता और ऋणी के बीच अनुबन्ध, अनुबन्ध के समय साक्षी की उपस्थिति एवं सार्थकता, ऋणी की मृत्यु या ऋण न चुका पाने की स्थिति मे हर्जाना, ऋणभार का हस्तांतरण, ऋण की राशि, ऋण अवधि, समय–स्थान, ऋण पर ब्याज की गणना इत्यादि का विस्तृत उल्लेख किया गया है ।

करारोपण एवं शुल्क – कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार कर राजकीय कोष का महत्वपूर्ण साधन है बिना करों के कोष में वृद्वि संभव नहीं है । कौटिल्य ने करों की महता पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि कर ही वह साधन है जिससे अधिकतम लोक कल्याण कारी राज्य की स्थापना की जा सकती है ।[6] कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में कराघात और करापात दोनों के सन्दर्भ में प्रकाश डाला है । अर्थशास्त्र कर अधिकारियों की नियुक्ति के साथ विभिन्न कर स्त्रोतों का उल्लेख करता है जैसे – कृषि कर, खनिज कर, चुंगी कर इत्यादि । अर्थशास्त्रानुसार –

अलब्धलाभार्था लब्धपरिरक्षणी रक्षितविवर्धनी वृद्वधस्य तीर्थे प्रतिपादनी च ।।

अर्थात् जो कर प्राप्त नहीं किया गया है वो प्राप्त किया जाना चाहिए, जो प्राप्त हो गया हो उसे संरक्षित किया जाना चाहिए तथा जो संरक्षित हो गया हो उसे समानता के आधार पर लोक कल्याणकारी कार्यो में लगाया जाना ही एक राजा का धर्म है ।[7]

निष्कर्ष –

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में प्राचीन भारत की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और न्यायिक व्यवस्था के लिए एक राजा को दिए गए उपदेश शामिल है यह अर्थशास्त्र यह इंगित करता है कि एक संगत सामाजिक तानेबाने के लिए क्या –क्या आवश्यक है। अर्थशास्त्र में प्रशासन के सम्बन्ध में कौटिल्य के विचारो की उपादेयता आज भी ज्यों की त्यों है । लोकसेवकों की योग्यतानुसार नियुक्ति, आवंटित विभाग, काम के बदले दाम, कर्त्तव्य एवं दायित्वो का व्यक्तिगत निर्धारण और भ्रष्टआचरण के सम्बन्ध में दण्डनीति निश्चित ही सुशासन के प्रति जबाबदेही प्रदर्शित करती है । राजनीति और कुटनीति के सन्दर्भ में उनके विचार वैदेशिक–अन्तर्राष्ट्रीय मामलों के निस्तारण में पथ–प्रदर्शक है । इसी प्रकार सशक्त राज्य के निर्माण में वित्त और वित्तीय मामलों में उनके विचारो की प्रासगिकता चिरस्थायी है । ऋण प्रबन्ध और ऋण उपयोगिता के सम्बन्ध में उनके विचार वर्तमान ऋण व्यवस्था से रूबरू करवाते है । सुसंगठित और केन्द्रीयकृत अर्थव्यवस्था के रूप में उनके करारोपण के सिद्वान्त आधुनिक आर्थिक सिद्वान्तों के हुबहु प्रतीत होते है । भ्रष्ट, अनैतिक, अधम और नीच व्यक्तियों को उनके किए गए कृत्यों से राज्य को होने वाले क्षय के अनुपात में ही दण्ड के प्रावधान उच्च कोटि की न्यायिक व्यवस्था प्रमाणित करते है । शैक्षिक प्रणाली के रूप में कौटिल्य विद्या के चारो स्तम्भ निश्चय ही व्यक्ति के चहुमुखी सर्वागिण विकास के साथ राज्य के उत्पादन, आय एवं रोजगार को बढावा देने वाले है । इस प्रकार कौटिल्य का अर्थशास्त्र प्राचीन भारतीय ज्ञान की उतम पराकाष्ठा सिद्व करता है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. कौटिल्य के आर्थिक विचारों की वर्तमान युग में प्रासंगिकता – डॉ प्रकाश सिरवी ।
2. प्राचीन भारतीय ज्ञान परम्परा और ईतिहास – डॉ सावित्री परिहा , श्रीमति प्रतिभा चौहान ।
3. कौटिल्य अर्थशास्त्र–एक संक्षिप्त ऐतिहासिक अध्ययन , डॉ राकेश पटेल ।
4. कौटिल्य अर्थशास्त्र हिन्दी अनुवाद, विद्याभास्कर वेदरत्न प्रो. उदयवीर शास्त्री
5. कौटिल्य के आर्थिक विचार – वर्तमान सन्दर्भ में , डॉ रेणु जैन ।
6. कौटिल्य अर्थशास्त्र , अनिल कुमार मिश्र ।
7. Kautilyas Arthshastra , डी. आर. शामाशास्त्री ।